भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-17, अंक-8 शुक्रवार, 26.8.94	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी अगस्त, 1994	वार्षिक चन्दा-50.00 प्रति अंक : 5.00

पहली सितम्बर.....धरती के परम मंगल का दिन !

भगवान की हम सब पर अत्यधिक कृपा कहें या हमारा सौभाग्य या पूर्व के बलिष्ठ संस्कार या हमारे पूर्व के सत्कर्मों का फल कि प.पू. काकाजी, प.पू. पप्पाजी, प.पू. स्वामिजी, प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी, पू. साहेब, पू. दिनकरभाई जैसे भव्य गुणातीत स्वरूपों, बिना कोई साधन किए, हमारे जीवन में सामने से आ गये ! हमें स्वीकारा इतना ही नहीं-हमारे इस लोक-परलोक की जिम्मेदारी लेकर हमारी आत्मा के पथ प्रदर्शक बनकर देह रहते हुए अक्षरधाम की भूमिका की ओर ले जाने का रात और दिन अविरत परिश्रम कर रहे हैं.....जीवन कक्षा में से मानव, मानव में से महामानव और महामानव में से निरंतर गुणातीतभाव में रहता करने का सतत् परिश्रम ये गुणातीत स्वरूपों कर रहें है। धन्य है गुणातीत स्वरूपों की अपार धीरज को ! ना तो गिना समय, ना ही गिना परिश्रम, ना देखे हमारे दोष या प्रकृति ! केवल संबंध देखकर अकारण फिदा हो गए हम पर !

इन्हीं में से एक दिव्य विग्रह प.पू. पप्पाजी का प्रागट्य दिन.....यानि पहली सितम्बर ! अहंता, ममता जैसे अनेक दोषों से तपे हुए भक्तों, मुमुक्षुओं, साधकों के जीवन में उन्होंने अपना निजी संबंध देकर-केवल निर्व्याज प्रेम देकर सबको भक्ति में भिगो दिए। जीवों के अनेक जन्मों के अंधकार उन्होंने दृष्टिमात्र से दूर करके, दुर्गुणों के बंधन से मुक्त करके समस्त गुणातीत समाज पर प्रभु प्रेम की वर्षा की। आश्रितों के दोषों की ओर नज़र ही नहीं...केवल उदार हृदय से क्षमा दी ! सभी को सुख-सुख से, आनंद से सरल, सचोट मार्गदर्शन देकर गुणातीत स्थिति कराने निरन्तर उद्यम कर रहे हैं। हमें तो, केवल निरुत्थान निश्चय रखकर उनके आसरे पड़े रहना है।

गुणातीत स्वरूपों ने स्वयं हर प्रसंग पर ऐसा जीवन जीकर दर्शाया है कि 'गुरू' की मर्जी में ही हां से हां और ना से ना रखकर यदि जीयेंगे, तो हर क्षेत्र में सफलता हमारे कदम चूम लेगी। प.पू. काकाजी व प.पू. पप्पाजी ने जब गुरुहरि योगीजी महाराज की बहनों के भगवान भजने के बारे मर्जी देखी.....तो बस उसी अभिप्राय की भक्ति अदा करने भयंकर मान-अपमान कुछ भी नहीं गिना... संस्था से विमुख होना पड़ा, पर तब भी गुरुहरि योगीजी महाराज की ओर की भक्ति छोड़ी नहीं। अब तक यही कहा जाता था कि स्त्री कभी एकांतिकी सिद्धदशा प्राप्त नहीं कर सकती ! युगों से चली आ रही इस मान्यता पर प.पू. काकाजी, प.पू. पप्पाजी, प.पू. स्वामिजी ने सेरे लगा दिए !! सच्चाई की विजय के फलस्वरूप आज संतों, बहनों, युवकों, गृहस्थों का महामानव का आखिर एक विशाल दिव्य समाज आध्यात्मिकता की भूख रखकर जीने निरन्तर प्रयत्नशील हैं।

और.....अनंत चेतनाओं का पुंज, दिव्य विग्रह

मनुष्यदेहधारी प.पू. पप्पजी अनंत कल्याणकारी गुणों के दाता होते हुए भी, एक सामान्य साधक की अदा से हमारे साथ हमारे जैसा ही बनकर जीवन जी रहे है। अनोखी संकल्पशक्ति, भूत-भावि-वर्तमान का ज्ञाता होते हुए भी–भगवान का सारा ऐश्वर्य होते हुए, उसे छिपाकर अल्प संबंध वालों के पास भी सतत् दासभाव.....खुद गरजु बनकर प्रभु के संबंध में आये सभी की सेवा का एक भी मौका कभी नहीं चूकते !

हम सभी जानते हैं कि अभी-अभी प.पू. पप्पाजी को हार्ट की बिमारी के कारण बाई पास सर्जरी करानी पड़ी....उसके बाद प.पू. पप्पाजी ने स्वयं अपने हाथों से 6 अगस्त 1994 को एक पत्र सारे गुणातीत समाज के नाम लिखा, जिसे पढ़कर हम सभी की आँखों में पानी आ जाये। स्वयं साक्षात् स्वरूप होते हुए-इतनी ऊँची कक्षा पर होते, अठत्तर वर्ष की उम्र में भी उनके नितरते अजोड़ दासभाव, सेवकभाव का सम्यक् दर्शन यह पत्र कराता है–

समग्र बृहद् गुणातीत समाज के सभी **अक्षरमुक्तों** की सेवा में–आप सब ने आपका सर्वस्व स्वामिश्रीजी को अर्पण करके भव्य समर्पण किया। धन्यवाद !

मेरी बिमारी की बात सुनते ही-**तुरंत ही** मेरे प्रति के अपार प्रेम के कारण **आप सभी धून करने लग पड़े।** महाराज ने कहा है कि **'यज्ञानां जपयज्ञोस्मि'।** गीताजी भी ऐसा ही कहती है। **सर्व यज्ञों में श्रेष्ठ यज्ञ-जपयज्ञ** और वह आप अभी तक निरन्तर करते ही रहे–अविरत रूप से–थके बिना **यज्ञ किया**.....यज्ञ में स्वयं का प्रिय व कीमती-अपने ईष्टदेव को ध्येय सिद्धि के लिए अर्पण करते हैं। तो तुम्हारा कीमती समय-खुद का प्यारे से प्यारा समय घूमने-फिरने का नियमित रूप से मेरा स्वास्थ्य अच्छा हो उस हेतु से ही-**वही निशान** लेकर-तुम धून करने लग पड़े और हर पहली तारीख को करते ही हो। Prayers are always heard by God. और **प्रभु ने तुम्हारी धून्य के प्रताप से** मेरा स्वास्थ्य कम से कम समय में अच्छा कर दिया। आपके **दर्शन कराने ले आये** !

तुम्हारा यह ऋण-मैं-कैसे चुका सकूँगा? प्रभु को प्रार्थना और अंजीजीभरी याचना करता ही रहूँगा कि हे प्रभु ! तुम्हारे संबंध वाले सभी को तन-मन-धन और आत्मा के सुख से सदा ही सुखी रखने की कृपा करना। उन्हें देशकाल कभी भी लगने ही नहीं देना। ऐसी रक्षा आप करना और जन्मोजन्म ऐसे अक्षरमुक्तों की **सेवा** करने मुझे उनके बीच जन्म देने की कृपा करना। अब से **मेरी** जिंदगी की पल-पल की सेवा-प्रार्थना का **फल** उन्हें देने की कृपा करना-ऐसा संकल्प करता हूँ-स्वीकार करना।

आज इस पावन अवसर पर प.पू. पप्पाजी के चरणों में यही प्रार्थना...हे प्राणाधार ! आपका स्वरूप खूब भव्य व गहन है। हमारी कोई हैसियत-ताकत नहीं कि आपको पहचान पायें। परन्तु जैसे बिन्दु सागर में यदि अपना अस्तित्व खो दे तो सागररूप हो जाता है, वैसे हम सब, हमारे ''स्व'' का लय करके आप में व समग्र गुणातीत समाज में निर्दोष बुद्धि से-दिव्यभाव से खो जायें..... जन्मों से मनबुद्धि के आकार से ही जीकर समय गवाया है, पर अब समय न गवाएं....ऐसा बल-बुद्धि व प्रेरणा-करूणा आप जरूर बरसाना.....

दूसरी ओर 1953 में लिखा प.पू. पप्पाजी का एक लेख पढ़े, तो गुरूहरि योगीजी महाराज को सर्वोपरि भगवान मानने की अद्भुत निष्ठा ही उनके अनादि के स्वरूप होने का सम्यक् दर्शन कराती है.....एक-एक शब्द अत्यंत गहरा रहस्य लिए हुए है.....प.पू. पप्पाजी ने गुरूहरि योगीजी महाराज को अपने जीवन में क्या माना? किस दृष्टि से योगीजी महाराज को निहारा? जीवन में अच्छे या बुरे दिखाई पड़ते हर प्रसंगों में 'योगी' को कैसे कर्ता-हर्ता माना। और फलस्वरूप योगीरूप ही हो गए ! और हम हमें मिले स्वरूप को क्या मानते हैं? इस पत्र से वह फर्क पता चलेगा कि क्या हमने सच में गुणातीत स्वरूप को 'भगवान' माना है? तो फिर हमारे जीवन में ये चीजें बननी ही चाहिए ! अगर नहीं बनती तो इसका अर्थ यही कि हमारी सर्वोपरि निष्ठा में कसर है।

आईये हम सब इस लेख का एक-एक शब्द ग्राह्यदृष्टि से पढ़े, विचारें और मनन-चिंतन करके अंतर्दृष्टि को पाये। भीतर में स्वयं को टटोलें और प्रार्थना करें कि हे साक्षात् स्वरूपों ! हमें ऐसा पवित्र बुद्धियोग जरूर देना कि आपके दिखाये राहपथ पर, आपके ही बल से, आपको ही सर्व कर्ता-हर्ता मानकर निर्भयता, निश्चिंता व सर्वोपरि निष्ठा से दौड़े.....

भगवान मिले ?

भागवत धर्म के साररूप वचनामृत में श्रीजी ने लिखा कि पुरुषोत्तम नारायण पृथ्वी पर हर युग में मनुष्यरूप में भक्तजनों के लाड़ पूरे करने विचरते ही हैं। उन्हें पहचान कर, जानकर पा लेना वही भक्त का कर्तव्य है। तप, त्याग, नियम, धर्म और अनेक प्रकार के पुण्य हो तो वे जैसे हैं वैसे पहचाने जाते हैं। अपने सत्संग में प्रगट गुरुहरि शास्त्रीजी महाराज के अंतर्धान होने के बाद **वही के वही** प.पू.प्र.ब्र.स्व. गुरुहरि योगीजी महाराज में पूर्ण पुरुषोत्तम के रूप में विचरण कर रहे हैं। प्रत्यक्ष और प्रगट को पहचानने के सिवा ब्रह्मरूप हो ही नहीं सकते। उनकी कृपा व हमारे करोडों जन्मों के पुण्यों के कारण पूर्ण पुरुषोत्तम के रूप में विचर रहे प.पू. गुरुहरि योगीजी महाराज को सत्संग के अधिकांश भक्तों ने पहचाने तो हैं।

अब भगवान पाने यानि क्या? जगत में जिसकी भी इच्छा करो उसका खजाना व उससे भी पर ऐसे पूर्ण पुरुषोत्तम मिले तब पूर्णता को पाकर अहो-अहो भाव की मस्ती भक्त में क्यों नहीं आती। उसकी दो वजह हो सकती है। एक तो जो मिले व हमने जिन्हें माने वे शायद भगवान ना भी हो और दूसरा-मिल गये यूं मानते हैं, परन्तु सही अर्थ में उन्हें प्राप्त नहीं किया हो। जब तक प्राप्त नहीं करेंगे तब तक उसका सुख अनुभव नहीं कर सकेंगे। एक उदाहरण लें? जैसे कि आम–

1. मन से किसी के कहने पर उसके गुण जाने।
2. बुद्धि से उसके गुण-दोष तय कर लिये।
3. चित्त से उसके गुण-दोष का चिंतन किया।

और

4. उसका रस निकाल कर चखा।

पहले तीनों अनुभव मन, बुद्धि और चित्त में हुए, परन्तु उसका सुख आया नहीं। सुख तो जब आम चखेंगे तब आयेगा। उसे हमने आम प्राप्त किया–उसका रस अनुभव किया ऐसा कहेंगे। इसी प्रकार भगवान को-प्रत्यक्ष भगवान को मन, बुद्धि और चित्त की भूमिका तक तो हमारे में से बहुतों ने जाना है। परन्तु अंतःकरण आत्मा में जाने नहीं, अनुभव नहीं किया। सो हम लड़खड़ाते रहते हैं–जैसे कि कहीं आम खट्टा तो नहीं होगा? दांत तो खट्टे नहीं हो जायेंगे? इतना ही अविश्वासरूपी परदा हटा कर चलने लगेंगे–उसके सम्मुख चलने लगेंगे तो उसका सुख अनुभव किया जा सके–उसकी महिमा जैसी है वैसी जानी जाये और अनुभव सहित ज्ञान प्राप्त होगा–उसका सुख मिलेगा। अहोभाव आयेगा। प्रभु-प्रत्यक्ष के सम्मुख चलना यानि–बालक की भाँति विश्वासपूर्वक उसके आसरे जाकर उसे साक्षी रूप रखकर काम करें।

यूं उसका आसरा करके–कार्यों करे तब शुरूआत में दो प्रकार के कार्य होते हैं। शुद्ध जीवात्मा साक्षीरूप में वर्तता है, वह दृष्टा रूप में है और वासना युक्त जीवात्मा कार्यो करे-वह दृश्य !

प्रत्यक्ष भगवान साक्षीरूप रहकर वासनायुक्त जीवात्मा को अनुभव करा के, सच्चाई का भ्रम जो जीवात्मा को चिपटा है उसकी प्रतीति कराते हैं। वह भ्रम-माया कि जो नहीं है और उसे मान लिया है वह पके फल की भाँति गिर पड़ता है। दो वृत्तियाँ-दो सेनाओं में बंटी हुई भावनाओं के युद्ध को दृष्टा बनकर जीवात्मा देखता है। एक कौरवों की सेना जो 'में' से जुड़ी हुई मेरेपन की भावनाओं से ही कार्य करती है और दूसरी पांडवों की–जिसका सारथी प्रत्यक्ष भगवान है वह–जो कि शुरु-शुरु में भगवान को जँचे वैसे कार्य स्वभाव और बिना अनुभव के ज्ञान के कारण है। परन्तु धीरे-धीरे प्रत्यक्ष की उपासना और आज्ञा पालता जाये तो भगवान को जँचे वैसे कार्य ही उसके द्वारा अधिक से अधिक होते जाते हैं। आखिर में भक्त की यथार्थ स्वरूपनिष्ठा व आज्ञा पालन जैसे बढ़ता जाये वैसे दृष्टा और दृश्य एक हो जाते हैं। कार्य वही का वही रहता है, पर सभी कार्य प्रत्यक्ष भगवान की रुचि रहस्य और अभिप्राय के अनुसार सहज ही होता जाता है। सब कार्य **निर्गुण** हो जाते हैं ! ऐसा भक्त दिन-रात अहो ! अहो ! अनुभव करता है, दिव्यानंद अनुभव करता है, जीवन की पूर्णता अनुभव करता है और प्रत्येक कार्य में **उसकी** लीला का दर्शन करता जाता है ! उसे तो फिर प्रत्यक्ष की अधिकाधिक महिमा समझ में आती जाती है। उसकी लीला का वह अनुभव करता जाता है और उसी मय हो जाता है। उसके लक्षण? उसे वड़वानल अग्नि, भयंकर तांडव, समृद्धि के भंडार, पाप-पुण्य, सच-झूठ, अच्छा बुरा सभी में **उसकी ही** लीला अनुभव होती है और असीम **शांति पाता है।**

इस प्रकार की शांति और आनंद पाने रविन्द्रनाथ टैगोर वगैरे ने प्रयत्न किए परन्तु हीरा हीरे से ही बिंधा जाये–इस न्याय से प्रत्यक्ष भगवत् स्वरूप ही वैसी शांति अनुभव

सहित प्राप्त करा सकता है। ब्रह्म ही ब्रह्मरूप कर सकता है।

हमारे धन्य भाग्य हैं कि हमें साक्षात् भगवत् स्वरूप पहचान में आये हैं। प्रतीतिरूप हैं। हमें तो केवल **विश्वास रखकर** उनका आसरा ग्रहण करके –में और मेरेपन की ग्रन्थि छोड़कर इसकी जगह उनके (प्रभु के) विश्वास पर, उन्हें रखकर कार्य करने की शुरूआत करनी है। जैसे ही शुरू करेंगे वैसे ही प्रतीति होगी और प्रतीति होने पर अधिक से अधिक दृढ़ता होती जायेगी।

और कैसी ही ग्रन्थियाँ छूटती जायेगी। उससे नाटक के पात्र की भाँति वर्ता जायेगा। द्वन्द्वों से पर होकर उसकी ही **बंसरी** बन जायेंगे। और अंत में यथार्थ स्वरूपनिष्ठा और श्रद्धापूर्वक के अंतःकरण का जितना आनंदपूर्वक समर्पण होगा, उतनी उसकी कृपा होगी व कृपा दृष्टि हुई ऐसा कहा जायेगा। उसकी जितनी दृष्टि होगी, उतनी हमारी रक्षा होगी। काल, कर्म और माया का बंधन उड़ जाता है, संपूर्णरूप से बंसरी बन जाता है। वह जैसा निकलवाये वैसा ही सूर निकालता है। और वही जीवनमुक्त जीते हुए भी अक्षरधाम का आनंद अनुभव करते और....तब कहा जाये कि भगवान मिले !

किसी को प्रश्न होगा कि यह गप्पें तो नहीं है न? इसके समर्थन में किसी ने यह प्रयोग करके सफलता प्राप्त की है? तो हाँ ! हमारे सत्संग में ऐसे खूब उदाहरण है। भगतजी महाराज, जागाभक्त से लेकर अ.नि. मगनभाई, पू.सी.टी. पटेल, वगैरा साक्षात् चलते-फिरते मंदिरों-प्रभु की बंसरियाँ है। इतनी प्रतीति के बाद तो यदि हम भी करने लग पड़ेंगे तो उत्तरोत्तर गंदे पानी की बूंद में से-शुद्ध गंगा के प्रवाह में मिल जाकर उनके ताल से नाचेंगे–दिव्य आनंद व दिव्य शांति अनुभव करेंगे–जीते जी अक्षरधाम का सुख ले सकेंगे।

परन्तु हम 'भगवान-भगवान' शब्दों में ही बोलते हैं। हमारी बुद्धि सवा सेर और जिसे भगवान कहते हैं उसकी पौना सेर ! भगवान कहते हैं, तब भी मनुष्यभाव से देखते हैं। मंदिरों में बैठने वाला भगवान प्रत्यक्ष होते हुए भी सारा भार अपने माथे पर लेकर उसका अकर्तापन सिद्ध करते हैं, वर्तन में स्वयं का कर्तापन साबित करते हैं। यूं सब को तो धोखा दे पायेंगे, परन्तु भगवान थोड़े धोखा खायेंगे? मुक्तभाव व दिव्य आनंद हम थोड़े ले पायेंगे? खाना तैयार हो, पर जब तक हाथ से मुँह में लेकर चबायेंगे नहीं तब तक पेट थोड़ा भरेगा? उसी प्रकार मन-बुद्धि से निश्चय करके **वर्तन** में नहीं रखेंगे तब तक उसका **आनंद** भी कहां से आयेगा? भगवान मिले थोड़े कहे जायेंगे? भगवान मिले प्राप्त हुए उसके लक्षण जानते हैं?

1. दिन-रात अखंड अहो ! अहो ! के साथ आनंद वर्तता है?
2. उनकी लीला, नाटक देखकर उसमें भाग लेकर, उनकी महिमा अधिक से अधिक समझ में आती जाती है?
3. अंतर्दृष्टि करके टटोलें कि साध्य मिलने के बाद जो छोड़ना चाहिए, उसे पकड़ रखा है? अंतर टटोल कर, सभी धर्म छोड़कर **साध्य** मिलने के बाद उसे ही **पकड़** कर रखें तो वे प्राप्त होंगे-होंगे और होंगे ही।

–प.पू. पप्पाजी महाराज
अप्रैल, 1953

❑❑❑

स्वामी की बातें

354. सत्त्वगुण में यूं विचार करना कि इस साधु से ही मेरा मोक्ष होना है। इसलिए चाहे कितनी ही कठिनाईयाँ आयें तो भी उसका संग छोड़ना नहीं।
प्र-5,121

355. जीव और देह का व्यवहार पृथक समझना और यूं न समझे तो ऐसी भव्य प्राप्ति होने के बावजूद भी दुर्बलता-हीनता रहा करेगी। भगवान की आज्ञा से गृहस्थाश्रम करे तो भी निर्बंध है।
प्र-5,123

356. एक हरिभक्त को रोग मिटाने के लिए गोपालानंदस्वामी ने नीम का रस पीने कहा, जिससे रोग तो मिट गया; लेकिन नीम का बंधन ऐसा लग गया कि न पीये तो बुखार आ जाए ! फिर धीरे-धीरे कम करने पर वह बंधन टला। यूं यह लोक लिपटा है, उसे ऐसे ही टालना। जैसे कि मंदिर आना और घर जाना व घर का काम बच्चों को करने देना। यूं अभ्यास करने से टल जायेगा।
प्र-5,124

357. हरिशंकरभाई के पूछने से बात करी कि सर्वज्ञ तो भगवान हैं ओर दूसरे तो अल्पज्ञ हैं। सो,

पतिव्रता की दृढ़ता रखनी तथा ध्यान भगवान का करना व बहुत बड़े साधु की दिल की सच्चाई से सेवा करे तो वह भगवान से मिला देता है। प्र-5,125

358. बड़े को यदि कोई बात किसी को समझानी हो तब दूसरे के पास भेजकर उससे बात करा कर समझाते हैं, लेकिन स्वयं नहीं कहते। गोपालानंदस्वामी मेरे से बात करा के समझाते थे। ऐसी बड़ों की रीत है और फिर स्वयं उसका प्रमाण कर देते हैं। प्र-5,127

359. पंचाला का सातवां वचनामृत पढ़ाकर स्वामी ने बात करी कि इस प्रगट भगवान को निर्दोष समझने पर कुछ करना बाकी नहीं रहता। और चमत्कार दिखाई पड़े तो शेखजी की तरह झेला नहीं जाये। इसलिए कसर जैसी रखी है। भगवान को निर्दोष समझने से स्वयं निर्दोष ही है और दोष जो दिखाई पड़ते हैं वह तत्व के दोष हैं। निर्दोष तो एक भगवान ही है। देशकाल तो भगवान को नहीं लगे, जीव को तो लगेगा ही क्योंकि प्रारब्ध-कर्म से बना देह है, परन्तु उपास्य मूर्ति को निर्दोष समझने से वह दोषरहित हो ही गया है। प्र-5,130

360. नासमझ जो-जो करे उसका आगे को फल नहीं मिलता। भगवान द्वारा ही कल्याण है। और कुछ चाहें कितना भी करा हो, लेकिन उपासना में ठीक नहीं हो तो उसका मोक्ष नहीं होता। बाकी सब कुछ तो धर्म, अर्थ और काम के लिए है। प्र-5,131

361. स्वामिनारायण मंत्र जपने से तो रोग मिट जाए, सांप ने डंसा हो तो जहर उतर जाए और काल, कर्म, माया से रहित हो जाए। प्र-5,132

362. भगवान तथा संत का माहात्म्यसहित निश्चय जिसे हो उससे प्रभु लापरवाह नहीं रहेंगे और काल, कर्म, माया ये तो जड़ है। सो, कर्ता-हर्ता भगवान को मानना और रोटी के लिए निश्चिंत रहना व भजन करना। दुःख नहीं मानना। अत्यधिक निश्चिंता-लापरवाही कल्याण के मार्ग में विघ्न हैं। प्र-5,133

363. हरिशंकरभाई ने पूछा कि वचनामृत में बताये साधु को पहचान नहीं पाये, उसका क्या करना? तब बोले कि वह बात कही नहीं जा सकती—यदि कहने जायें तो मार पड़े व अवगुण आए ! सो, जैसे समझते हो वैसा समझना और बरामदे में ही घोड़ा फिरा लेना। वह क्या? तो यज्ञ करने वाले दसों दिशाओं में घोड़ा फिरा कर, जीत कर यज्ञ की पूर्णाहुति करते हैं। यूं जिसने दस इन्द्रियों रूप दस दिशाएं जीती हैं, यानि—जिसकी वृत्ति किसी विषय में खींची नहीं जाती हो वैसे संत में जुड़ जायें तब उसका ज्ञानयज्ञ पूरा हो गया ! यूं करना वह बरामदे में ही घोड़ा घुमा कर यज्ञ करने समान है। प्र-5,134

❑❑❑

अनिर्देश की गतिविधियाँ....

पिछले काफी समय से हम कहीं शिविर के लिए नहीं गए थे। सो पू.गुरुजी ने स्वामिनारायण मंत्र पोथियाँ गंगा में विसर्जित करने का निमित्त बनाकर 11 से 15 अगस्त 1994 तक का देहरादून, मसूरी, हरिद्वार, ऋषिकेश ले जाकर शिविर करने का प्रोग्राम बनाया....सभी हरिभक्तों को घूमने की तो कुछ इच्छा नहीं थी, पर पू. गुरुजी के सान्निध्य का ही अत्यधिक उत्साह व उमंग थी। बम्बई-ताड़देव से प.पू. काकाजी के लाड़ले योगेश्वरों भी इस शिविर में आए, गुजरात से पू. आणंद बापा, पू. दिलीप भाई वगैरे व पंजाब से भी मंडल पू. गुरुजी का सान्निध्य पाने की अभिप्सा से आया था।

11 की सुबह 7.00 बजे करीब सवा सौ से अधिक हरिभक्तों का काफिला पू. गुरुजी के साथ तीन गाड़ी व चार बस लेकर निकला। अब तक ऐसी बातें सुनी थी कि

प्रभु केवल अपने भक्तों को लाड़ लड़ाने पर धरती ही आते हैं....भगवान कृष्ण का पूरा जीवन देखें तो केवल पाँच पाण्डवों व द्रौपदी के लिए ही गया। पू. गुरूजी की भी शिविर के बारे की उमंग, परिश्रम देखकर इस बात की सत्यता सभी हरिभक्तों को अनुभव हो रही थी....

रास्ते में 'चीतल' पर नाश्ता करा। साहिबाबाद वाले प.भ. राजा अंकल के समधी प.भ. हरिमोहन कपूरजी जो कि 10 दिन पहले ही पू. गुरूजी के सम्पर्क में आए और हरिद्वार का प्रोग्राम सुनकर उन्होंने पू. गुरुजी को सभी हरिभक्तों के साथ रुड़की में अपने घर भोजन लेने की प्रार्थना करी थी.....सो दोपहर भोजन करने वहां गए। प.भ. हरिमोहनजी व उनके परिवार ने खूब अच्छी व्यवस्था की थी। सभी को वहां खूब अपनापन लगा....उनके परिवार वाले तो यह कह रहे थे कि **बड़ा भाग्य वाला घर होता है जहां ऐसे संत और भक्तों आते हैं।** इतना कम परिचय होते हुए भी परिवार के हर एक सदस्य के चेहरे पर अहोभाव देखकर सभी हरिभक्तों भावविभोर हो गये.....

रुड़की से भावभीनी विदाई लेकर 6.00 बजे शाम को सभी देहरादून अग्रवाल धर्मशाला पहुँच गए....वहां रात को प्रसाद लेकर सभी सो गए। 12 की सुबह 6.30 बजे सभी मसूरी जाने निकले। प्रकृति ने भी अपना पुण्य कमाने साथ दिया कि बारिश नहीं हुई। मसूरी में कैम्पटी फॉल पर पू. गुरूजी ने धून्य करके सब भाईयों के सिर पर पानी डाला.....दोपहर को मसूरी के मालरोड पर स्थित लक्ष्मीनारायण मंदिर में भोजन करके सब घूमने निकले। पू. गुरुजी सभी को प.पू. काकाजी के प्रसादी स्थान पर ले गए जहां पर प.पू. काकाजी ने पू. गुरूजी को कहा था कि–**'साधु के संबंध से हमें इतनी ऊँचाई पर उठ जाना है कि जैसे मसूरी से देहरादून का कुछ नहीं दिखाई पड़ता !'** इस प्रसादी के स्थान पर पू. गुरूजी ने धून्य करवाई और भजन गवाया। मसूरी से देहरादून वापिस आकर भजन संध्या का प्रोग्राम रखा था। भजन गाने में सेवकों का इतना अधिक जोश था कि सभी भाईयों आनंदविभोर होकर नाचने लगे ! फिर रात को प्रसाद लेकर सभी सो गए।

13 की सुबह 7.00 सभी सहस्त्रधारा गए। वहां पहुँच कर पू. गुरूजी के साथ सभी एक प्राचीन शिव मंदिर के दर्शन के लिए गए. वहीं नाश्ता करके पू. गुरूजी सभी भाईयों को दून नदी में आनंद कराने ले गए...प.पू. काकाजी की स्मृति कराके स्नान करते हुए पू. गुरुजी ने धून्य करके सभी के मस्तक पर पानी डाला.....नहाने के बाद पू. गुरूजी वहीं सत्संग सभा करी थी। स्वामी की बात समझाते हुए पू. गुरूजी ने प.पू. काकाजी की देहरादून, सहस्त्रधारा आने की स्मृति कराई कि **'ऐसे पुरुषों के आने से ऐसे स्थान की हर रज-कण चैतन्यमय बनती है। प.पू. काकाजी हमें कैसे पुरुष मिले जो हमारा प्रायश्चित भी खुद करें.....खुद जसलोक अस्पताल में गए, पर हमें नहीं भेजा। प.पू. काकाजी हमें हीरे देना चाहते हैं और हम उनसे पत्थर माँगते हैं। प.पू. काकाजी ने कभी बापा को परोक्ष माने ही नहीं न किसी को मानने दिया.....एक वैज्ञानिक उदाहरण देकर समझाया कि दूध पीता बच्चा बीमार हो जाता है तो दवाई माँ को दी जाती है.....सो 'भूल्का बन जाओ ! सहस्त्रधारा' में यह संकल्प किया कि प.पू. काकाजी जो हमें देना चाहते हैं वो अब लेने हम तैयार हो जायें।'**

सहस्त्रधारा से देहरादून लौटकर सभी तुरन्त हरिद्वार के लिए रवाना हुए और शाम को 6.00 बजे हरिद्वार के भारत माता मंदिर के 'वृद्धाश्रम' में पहुँच गए। वहां बहुत ही पवित्र व शांत वातावरण था तथा खूब अच्छी व्यवस्था थी। वहां के कार्यकर्ता पू. शर्माजी ने सर्व प्रकार से सहयोग देकर आत्मीयता का दर्शन कराया.....शाम को 'वृद्धाश्रम' के प्रांगण में ही धून्य-भजन, सत्संग सभा का आयोजन था। भजन के पश्चात् प.भ. विपिनभाई, प.भ. दालिया साहब, प.भ. दोशी साहब, पू. निष्कामभाई ने पू. गुरुजी के पास अपने प्रवचन द्वारा जीवन में साधु के साथ एक खुला संबंध होने की दिल से प्रार्थना की। पू. गुरूजी ने स्वामी की बातें प्र-5 की 22वीं पढ़वाते हुए बात करी कि- **साधु को एक ही उद्यम होता है कि उसके सम्पर्क में जो आए उसका प्रभु के साथ संबंध दृढ़ हो जाए। दाखिल होते ही अपनापन लगे तो समझ लेना कि वहां भगवान की शक्ति काम कर रही है। सच्चे साधु के जीवन में आने से जीवन का केन्द्र बदल जाता है ! बड़ों के वचन से करना- जैसे गणेशजी ने गाय की प्रदक्षिणा करी थी उसी के समान है। स्वभाव चाहे कैसे भी हों पर यदि साधु के साथ तुम्हारा एक पक्का संबंध हो तो वे रक्षा करेंगे ही.....पू. काकाजी के पास आया आज तक एक भी case बिगड़ा नहीं देखा। ध्यान में महिमा का विचार करना.....अंतर में भजन करना सीखना।'** सभा के बाद सभी ने प्रसाद लिया और सोने चले गए।

14 की सुबह जल्दी ही सभी ऋषिकेश जाने निकले। वहां लक्ष्मणझूले के पास पहुँचते ही पू. गुरूजी अचानक ही लक्ष्मणजी के एक मंदिर में गए.....वहां पहुँच कर पता चला कि नीलकंठ वर्णी (स्वामिनारायण भगवान) वन विचरण दौरान इसी जगह पर 21.8.1792 को आए थे। वहां पर प.पू. प्रमुखस्वामी महाराज ने नीलकंठ वर्णी के रूप में महाराज की मूर्ति भी स्थापित करी हुई है। सब हरिभक्त महाराज का प्रसादी स्थान जानकर–दर्शन पाकर खूब धन्य हुए। पू. गुरूजी ने वहां धून्य करी और बताया कि उनको पहले से ही लक्ष्मणजी का सेवकभाव खूब स्पर्श करता है। भगवान राम ने जब लक्ष्मणजी को सीताजी के निर्दोष होते हुए वन में छोड़ आने की आज्ञा करी तब लक्ष्मणजी ने पहले तो मना ही करी। फिर जब रामजी ने कहा कि सेवक तू या मैं? तब लक्ष्मणजी ने मार्मिक वाक्य कहा कि 'सेवक' को अपना दिल–अपनी भावना रखने का भी अधिकार नहीं होता। यह बात अब समझ आयी। पू. गुरूजी ने यह बात करते हुए कहा कि **'लक्ष्मणजी जैसा सेवकभाव हम सब में प्रगटे और कल तो 15 अगस्त.....तो मन-बुद्धि, चित्त, अहम् के शिकंजे से मुक्त होना वही असली स्वतन्त्रता है। स्वामी-सेवकभाव चूके बिना हम सब ऐसी स्वतन्त्रता पाये.....'** इस प्रकार प्रार्थना कराई.....महाराज का प्रसादी स्थल और पू. गुरूजी की ऐसी बातें सभी को भीतर तक छू गई ! उसके बाद लक्ष्मण झूला देखकर वहीं पर गुरुहरि योगीजी महाराज के प्रसादी स्थल का दर्शन किया। एक अद्‌भुत अनुभव यहां भी हुआ। सत्संग में नए ही आए प.भ. भद्रायुभाई के छोटे लड़के-वैभव के खो जाने पर सबने तीव्रता व आत्मीयता से जो धून्य करी। वैभव तो मिल ही गया, साथ ही सभी को भगवान की शक्ति, भजन के उपाय तथा भक्तों की आपसी आत्मीयता का सम्यक् दर्शन हुआ। इसी दिन प.भ. कौशिकभाई का जन्मदिन था। सो, प.पू. गुरूजी ने एक सांस्कृतिक प्रोग्राम रखकर वृद्धाश्रम में सब भाईयों को खूब आनंद कराया।

15 की सुबह सब प.पू. कांतिकाका की अस्थि जहां प्रवाहित की थी उस 'स्वामी सर्वानंद घाट' पर गए। यहां पहले पू. गुरूजी ने कई भाईयों को व्यसन छोड़ने का संकल्प कराया। फिर तीव्र धून्य करके जयघोष के साथ मंत्र पोथियाँ गंगा के तीव्र प्रवाह में प्रवाहित की.....वृद्धाश्रम वापिस आकर फिर पू. गुरूजी ने सत्संग की सभा करते हुए बात करी कि **'हमारा वर्तन देखकर दूसरे को सत्संग का गुण आए वह हमारी सबसे बड़ी सेवा है। हमें प.पू. काकाजी का कार्य बहता रखकर प.पू. काकाजी का पितृ ऋण अदा करना है.....मानव स्वरूप में पृथ्वी पर आई विभूति को याद करके भजन करें तो अर्चिमार्ग से अपना भजन उन्हें पहुँचता है। कैसा भी प्रसंग बने पर भजन का ही उपाय लें.....प.पू. काकाजी के पास प्रार्थना कि अब तक आपको भूल कर जो भी किया वह माफ करना और अब से आपको भूल कर कोई भी कार्य न करें–ऐसी सजागता आप कृपा करके रखवाना।'** पू. गुरूजी के बाद प.भ. राकेशभाई, पू. ऋषिभाई, प.भ. भद्रायुभाई, जूनागढ़ से आए पू. आणंद बापा, ताड़देव के योगेश्वर पू. राजुभाई ठक्कर व पू. भाईस्वामिजी ने इस शिविर की पूर्णाहुति में हम सभी की ओर से आशीर्वाद माँगे। सभी के चेहरे से ऐसा लग रहा था कि अरे पाँच दिन इतनी जल्दी खत्म हो गए ! अब फिर घर वापिस जाना? पू. गुरूजी के निरन्तर सान्निध्य ने सभी इन्द्रियाँ अंतःकरण को जैसे खींच रखा था-प्रसाद लेकर सब दिल्ली वापिस आने निकले और आनंद करते दिव्य स्मृतियों का खजाना लेकर सब दिल्ली वापिस लौटे....

शिविर के ये चार–पाँच दिन पू. गुरूजी के साथ मानो सभी सब कुछ भूल गए थे। किसी को घर-व्यवहार याद ही नहीं आया....पू. गुरूजी ने सभी को ब्रह्मानंद में बांध लिया था और पंजाब से आए प.भ. विनोदभाई ने अत्यधिक भावविभोर भजन गाकर सब में जोश व उमंग लाकर एक बहुत बड़ी सेवा करी; सो उनको भी हृदय से धन्यवाद हैं। प.भ. प्रभाकरभाई, प.भ. बच्छराजभाई, प.भ. कौशिकभाई जानी, प.भ. राकेशभाई, प.भ. विनोद भाई ठक्कर, प.भ. राजुभाई शाह, प.भ. प्रकाशभाई ठक्कर इत्यादि सभी भाईयों ने हरिभक्तों की सुविधा के लिए जो व्यवस्था करी–जैसे समय पर नाश्ता-चाय-खाना इत्यादि का जो ख्याल रखा उससे पू. गुरूजी को निश्चिंत कर ही दिया व सभी हरिभक्तों के दिल की प्रसन्नता पा ली....उनके इस परिश्रम के लिए खूब-खूब धन्यवाद !

❑ ❑ ❑

नम्र विनती

पिछले कई वर्षों से प्रकाशित होती 'भगवत् कृपा' सत्संग पत्रिका आपको प्रति मास मिलती ही होगी। 'भगवत् कृपा' का वार्षिक शुल्क देने के लिए अभी तक हमने कभी आग्रह नहीं रखा। परन्तु वर्तमान स्थिति में बढ़ती हुई मँहगाई को मद्देनजर रखते हुए हरिभक्त पाठकों से विनम्र निवेदन व अपेाा है कि वे 'भगवत् कृपा' सत्संग पत्रिका का वार्षिक शुल्क जो कि पहले 30/-रु. था, अब 50/-रु. समय पर भेजने की कृपा करें ताकि भविष्य में भी इस पत्रिका द्वारा हम आपका मार्गदर्शन व प्रभु सेवा निरंतर करते रहें।

याद रखें कि : **वार्षिक शुल्क**

देश में - **Rs. 50**

विदेश में - **U.K.- { 27**

U.S.A.-$ 40

व्रतोत्सवसूची

1.	दि. 29.8.94	सोमवार	जन्माष्टमी, व्रत
2.	दि. 1.9.94	गुरुवार	प्र.ब्र.स्व. पप्पाजी महाराज की जन्मजयंती
3.	दि. 9.9.94	शुक्रवार	गणेश चतुर्थी
4.	दि. 15.9.94	गुरुवार	जलझीलनी एकादशी, निर्जला व्रत
5.	दि. 16.9.94	मंगलवार	वामन द्वादशी, फराली व्रत
6.	दि. 19.9.94	सोमवार	पूर्णिमा
7.	दि. 20.9.94	मंगलवार	श्राद्ध प्रारम्भ
8.	दि. 23.9.94	शुक्रवार	ब्र.स्व.गुरूवर्य शास्त्रीजी महाराज का श्राद्ध दिन

PUBLISHED BY SADHU MUKUNDJIVANDAS FOR YOGI DIVINE SOCIETY
A-103, Ashok Vihar-III, Swaminarayan Marg, Kakaji Lane
Delhi-110052 (India) Tel.: 7229327, 7249327
Printed at : Chowdhry Mudran Kendra, 12/3, Sri Ram Marg, South Maujpur, Delhi Tel. : 2262473